पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के कथा साहित्य का समीक्षात्मक अनुशीलन

* डॉ. कृष्ण बीर सिंह

हिन्दी की उत्पत्ति मुनष्य की उत्पति के साथ ही हो गई थी। विश्व की चाहे कोई भाषा, समाज या स्थान हो, कहानी का वर्चस्व प्रत्येक स्थान पर उपलब्ध है। 'कहानी' का सामान्य अर्थ सुनाने या कहने से लगाया जाता है किन्तु कहानी ने साहित्य में अपनी विशेष पहचान बना लिये जाने के कारण, कहानी एक विधा के रूप में मान्य हो गई है। कहानी के मूलतः दो रूप हमारे सामने आते हैं- मौखिक एवं लिखित। मौखिक कहानियों का अपना एक स्वर्णिम इतिहास है जबकि लिखित कहानियाँ वैदिक संस्कृत, बौद्ध जातकों, संस्कृति, पालि, प्राकृत एवं अपभ्रंश आदि भाषाओं में उपलब्ध ग्रन्थों में मिलती हैं। आर्यो एवं दुस्युओं तथा उर्वशी-पुरुरवा आदि उपारख्यान वैदिक साहित्य में मिलते हैं। इसी भाँति पुराणों एवं वेदों में भी कहानियाँ मिलती हैं। कहानी की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखने से प्रतीत होता है कि कहानी हमें विभिन्न प्राचीन रूपों में प्राप्त होती है। जैसे-पौराणिक कथा, लोक कथा, आख्यायिकाओं, दन्त कथा, जातक कथा, आख्यानकों, पंचतन्त्र, कथा सरितसागर, शकुन्तलोपाख्यान, पैंगल-पंच विंशतिका, सावित्री उपाख्यान, हितोपदेश, शुक-सप्तति, गुणाढ्य की वृहत्कथा, सिंहासन द्वात्रिंशिका आदि। प्राचीन संस्कृति की कहानियाँ मुख्यतः पशु-पक्षी, अलौकिक चरित्र, अप्सरा गन्धर्व, बेताल आदि पर आधारित हैं जिनके द्वारा तत्कालीन राजकुमारों को आमोद-प्रमोद के साथ नैतिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। आगे चलकर इन कहानियों में राजा-रानी, देवता, परी, सेठ-सेठानी आदि पात्र जुड़ते चले गये किन्तु ये कहानियाँ आधुनिक कहानियों की जननी या मूल आधार के रूप में मान्य नहीं हैं क्योंकि हिन्दी कहानियों का कथानक सामान्यः मनुष्य तक ही सीमित है। कुछेक विद्वान हिन्दी साहित्य में कहानियों के उत्पत्ति एवं विकास को 'दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता' एवं चौरासी वैष्णवों की वार्ता से मानते हैं। वहीं कुछ आलोचकों एवं शोधार्थियों ने क्रमशः रानी केतकी की कहानी, राजाभोज का सपना, सुख-सागर, प्रेमसागर, नासिकेतोपाख्यान, यमलोक की यात्रा के अतिरिक्त, 'इन्दुमति' एवं बंग महिला दुलाईवाली कहानी को हिन्दी की सर्वप्रथम मौलिक कहानी माना है। किन्तु अभी तक यह निश्चित निर्णय नहीं हो पाया है कि हिन्दी की प्रथम मौलिक कहानी कौनसी है। खैर, इस विवाद में पड़ने का कोई औचित्य नहीं है। यह गहन शोध का विषय है। हिन्दी साहित्य में कहानी के क्रमवार विकास को समझने के लिए हम इसे विभिन्न खण्डों में विभक्त कर देते हैं ताकि कहानी की विधिवत-क्रमवार उन्नति को देखा जा सके। निष्कर्षतः हिन्दी में कहानी का पदार्पण भारतेन्दुकाल से हुआ जिसमें तत्कालीन कहानियों में सुलोचना, हमीरहठ महालय, सीलवती, राजसिंह, देवरानी-जिठानी की कहानी एवं कहानी टका कमानी आदि प्रमुख है। पुनः कहानी में एक विशेष परिवर्तन हुआ। सन् 1900 में प्रयाग से 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ जिसके साथ ही आधुनिक कहानियों की उत्पत्ति हुई जिसमें मुख्य रूप से-इन्दुमती, गुलबहार, प्लेग की चुड़ैल, ग्यारह वर्ष का समय, मास्टर भगवानदास, राखीबन्ध भाई, न्यिानवे का फेर, बंग महिला, दुलाईवाली, पंडित-पंडितानी, नकली किला आदि प्रसिद्ध हैं। इस समय को विद्वान द्विवेदीकाल के नाम से सम्बोधित करते हैं।

द्विवेदीकाल के पश्चात् प्रेमचन्द युग का सूत्रपात हुआ। कुछ विद्वान इसे प्रसाद काल के नाम से भी कहते हैं क्योंकि जयशंकर प्रसाद ने प्रेमचन्द से पूर्व हिन्दी में कहानी लिखना प्रारम्भ कर दिया था। अतः हिन्दी कहानी का प्रारम्भ वास्तव में सन् 1911-12 से ही माना जाना चाहिए। सन् 1911 से लेकर बाद तक कुछ विशिष्ट कहानीकारों ने इस विधा को समृद्ध किया जिनमें मुख्य रूप से जयशंकर प्रसाद, प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, अज्ञेय उग्र एवं यशपाल आदि हैं। इन्हें हिन्दी कहानी का आधार स्तम्भ कहा जा सकता है। मैं यहाँ प्रमुख हिन्दी कहानीकार एवं उनकी विशिष्ट कहानियों का उल्लेख करना इसीलिए समीचीन समझता हूँ ताकि हमें कहानी के विकास का क्रम और भी स्पष्ट हो सके। प्रसाद की प्रथम कहानी 'ग्राम' सन् 1922 में 'इन्दु' नामक पत्रिका में प्रकाशित हुई थी। इनके कुल पाँच कहानी संग्रह हैं- प्रतिध्वनि, छाया, आँधी, आकाशदीप एवं इन्द्रजाल। प्रसादकालीन अन्य कहानीकारों में सर्वश्री विश्वंभर नाथ कौशिक, जी.पी-श्रीवास्तव, राधिकारमण प्रसादसिंह एवं ज्वालादत्त शर्मा प्रमुख हैं। मुंशी प्रेमचन्द ने लगभग तीन सौ कहानियाँ लिखकर एक कीर्तिमान स्थापित किया है। उनकी कहानियों का संग्रह 'मानसरोवर' 6 भागों में प्रकाशित है। प्रेमचन्द की प्रथम कहानी सन् 1914 में 'पंच परमेश्वर' प्रकाशित हुई थी। प्रेमचन्द युगीन घर, शर्मा गुलेरी आदि प्रमुख हैं। सबसे अधिक पण्डित गुलेरी अपनी कहानी 'उसने कहा था' के आधार पर अमर हो गये हैं। इसी भाँति- 'अश्क, उग्र, बख्शी, लाल, वाजपेयी, ओझा, निराला एवं चतुरसेन' आदि कहानीकारों ने पारिवारिक, सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनीतिक कहानियों का सृजन किया है। प्रेमचन्दोत्तर कालीन साहित्यकारों में जैनेन्द्र का नाम अग्रणी है। इनके अलावा इलाचन्द्र जोशी, यशपाल अमृतराय, रांगेय राघव, रामवृक्ष बेनीपुरी, हरिशंकर परसाई, चोंच , बेढब, बरसाने लाल चजुर्वेदी, प्रभाकर माचवे, सेंगर, सत्यार्थी आदि मुख्य हैं।

स्वतन्त्रता पूर्व हिन्दी कहानियों में जो नेतृत्व गठन, चरित्र, जीवन मूल्य आदि की बात होती थी स्वतन्त्रता पश्चात् ये मूल्य कहानियों के धरातल के विनाश, झूठ-पाखण्ड, उद्दण्डता, असामाजिकता एवं अराजकता आदि ने स्थान लिया। कहानी के नवीन नामकरण के रूप में सामने आये जिनमें नई कहानी, अकहानी, अचेतन या सचेतन कहानी आदि प्रमुख हैं। विशेषतः सन् 1950 के पश्चात् कहानी में अभूतपूर्व परिवर्तन देखने को मिलता है। इस काल के कहानिकारों में धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, कमलेश्वर, राजेन्द्र यादव फणीश्वरनाथ रेणु, राजकमल चौधरी, मन्नू भण्डारी एवं श्रीकान्त वर्मा आदि के पश्चात साठोत्तरी या समकालीन कहानीकारों में रमेश बतरा, मधुकर सिंह, कृष्णा अग्निहोत्री, सुधा अरोड़ा, ज्ञानरंजन, धर्मेन्द गुप्त रवीन्द्र कालिया, मृणालपाण्डे, विष्णु प्रभाकर, मृदुला गर्ग, राजेन्द्र अवस्थी, यादवेन्द्र शर्मा चन्द्र, महीप सिंह, भीससेन त्यागी, काशीनाथ सिंह, रमेश उपाध्याय,

* अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, एस.एस.जी पारीक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जयपुर (राज.)

रामकुमार भ्रमर, दूधनाथ सिंह, वेद-राही, गोविन्द मिश्र एवं नरेन्द्र कोहली आदि प्रमुख हैं। हिन्दी कहानी की महिला कहानीकारों में उषा देवी मित्रा, महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान, रजनी पाणिकर, कौशल्या अश्क, तारा पाण्डे, चन्द्रप्रभा, सुधा अरोड़ा, ममता कालिया, दीप्ति खंडेलवाल, कृष्णा सोबती, वार्तिका अग्रवाल आदि प्रमुख हैं। हिन्दी कहानियों के चाहे कितने रूप या नाम हो जायें। कहानियों को विषय-वस्तु के आधार पर चाहे आठ वर्गों में बाँट दिया जाए या शैली के आधार पर कहानी के पाँच वर्ग बना दिये जाए अथवा रचना-लक्ष्य के आधार पर तीन एवं विषय-वस्तु के आधार पर पाँच वर्गों में विभक्त कर दिया जाए किन्तु प्रत्येक कहानी के हृदय मे प्रेम तत्त्व स्पन्दित होता रहता है। यह कहानी का मुख्य आधार है। पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के पिता शिवराम शर्मा मूलत गाँव-गुलेर, जिला कांगडा हिमाचल प्रदेश के निवासी थे। पं. शिवराम शर्मा ने शास्त्रों, वेदों-पुराणों का गहन अध्ययन किया था। धर्मशास्त्रों की सूक्ष्मता को बहुत ही बारीकी से समझा था। इसीलिए इन्हांने काशी में आयोजित शास्त्रार्थ में तत्कालीन प्रसिद्ध विद्वानों को सहज ही परास्त कर दिया था। चूँकि जयपुर नरेश काशी आया-जाया करते थे अत: उनको जब पं. शिवराम शर्मा के विषय में सूचना मिली तो वे उन्हें राजसम्मान सहिज जयपुर ले आए और उन्हें राजपुरोहित के पद पर आसित कर दिया। पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की माता जी श्रीमती लक्ष्मी देवी पण्डित शिवराम शर्मा की तृतीय पत्नी थी। पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का जन्म 7 जुलाई सन् 1883 को लाल हवेली, मोतीसिंह भोमियाँ का रास्ता, पुरानी बस्ती, जयपुर में हुआ। बचपन से ही बालक चन्द्रधर बड़ा प्रतिभावान एवं प्रखर बुद्धि वाला था। उसने संस्कृत के विभिन्न ग्रन्थों को कण्ठस्थ कर लिया था तथा वे धारा प्रवाह संस्कृत बोलकर बड़े-बड़े संस्कृत विद्वानों को आश्चर्य में डाल देते थे। शिक्षा-पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी को महाराजा कॉलेज जयपुर में प्रवेश दिलवाया गया जहाँ उन्होंने पण्डित दुर्गाप्रसाद से भाषा, साहित्य के अलावा अंग्रेजी भाषा का अध्ययन किया। सन् 1897 में मिडिल तथा सन् 1899 में एन्ट्रेस की परीक्षा इलाहाबाद बोर्ड से प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण की। मैट्रिक की परीक्षा कलकत्ता विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की। सन् 1901 में कलकत्ता विश्वविद्यालय से ही एफ.ए. की परीक्षा भी उत्तीर्ण की। सन् 1902 में प्रयाग विश्वविद्यालय से स्नातक की परीक्षा प्रथम श्रेणी में प्रथम स्थान प्राप्त कर उत्तीर्ण की। आपकी तीव्र इच्छा थी दर्शनशास्त्र में स्नातकोत्तर उपाधि प्राप्त करने की किन्तु अस्वस्थता के कारण अभिलाषा पूर्ण न हो सकी। **विवाह**-आपका विवाह सन् 1899 ई. की हरिपुर कांगडा हिमाचल प्रदेश निवासी कवि रैणा की पुत्री पद्मावती के साथ हुआ था। **नियुक्ति**-सन् 1904 में मेयो कॉलेज अजमेर में प्राध्यापक पद पर नियुक्ति एवं आपको खेतड़ी नरेश जयसिंह का शिक्षक एवं अभिभावक नियुक्त किया गया। सन् 1907 में जयपुर भवन के अभिभावक रूप में नियुक्ति हुई तथा सन् 1916 में संस्कृत विभाग, मेयो कॉलेज अजमेर में विभागाध्यक्ष पद पर नियुक्त हुए। **रचनाधर्मिता**-यद्यपि पं. गुलेरी का नाम हिन्दी साहित्य एवं साहित्य प्रमियों के अन्त:करण में समाहित हैं। उसने कहा था का जिक्र होते ही पण्डित गुलेरी स्मरण हो आते हैं किन्तु विडम्बना ही है कि बहुत कम लोग यह जानते हैं कि पण्डित गुलेरी जयपुर निवासी एवं राजस्थानवासी थे। पण्डित गुलेरी ने मिडिल से लेकर स्नातक की औपचारिक शिक्षा के अन्तर्गत-हिन्दी, ब्रज, राजस्थानी, अंग्रेजी, ग्रीक, संस्कृत, विज्ञान, तर्कशास्त्र, इतिहास, गणित एवं दर्शनशास्त्र विषयों का गहन अध्ययन किया था। शोधार्थी दृष्टिकोण के कारण आप सदैव अध्यन में लीन रहते थे। अधिक से अधिक पढ़ने, गुणने एवं समझने की प्रवृत्ति के कारण आपका यश दूर-दूर तक फैल चुका था। इसका एक ज्वलन्त उदाहरण, महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय द्वारा स्थापित ज्योतिष यंत्रालय जंत्र मंत्र के जीर्णोधार हेतु कैप्टन ए.एफ.गैटेर एवं कर्नल सर स्विण्टन को नियुक्त किया गया किन्तु उन्हें स्थानीय भाषा एवं अन्य तकनीक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता महसूस हुई जो संस्कृत एवं अंग्रेजी का ज्ञाता हो। पण्डित चन्द्रधर शर्मा का चयन किया गया। आज भी जयपुर स्थिति जंत्र-मंत्र वैधशाला यन्त्रों के जीणोद्धार एवं अन्य शोधकार्यों हेतु पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के नाम का पत्थर लगा हुआ है। हिन्दी साहित्य जगत के लोग या अन्य हिन्दी प्रेमी पर्यटक संभवत यह भूल जाते हैं कि यह चन्द्रधर शर्मा गुलेरी वही है जो उसने कहा था कहानी का प्रणेता है। खैर दूसरी पीड़ा का कारण पण्डित गुलेरी के कृतित्व से सम्बन्धित है। हिन्दी साहित्य के शोधार्थियों एवं विद्यार्थियों को पं. गुलेरी की मात्र दो-तीन कहानी एवं एक-दो निबन्ध से अधिक ज्ञात नहीं है। यह मात्र विडम्बना ही है अन्यथा पण्डित गुलेरी की विविध रचनाएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में नियमित रूप से प्रकाशित होती रही हैं। किन्तु जैसे सब समय के गर्त में समा गया है। किन्तु यहाँ यह विनम्र प्रयास किया जा रहा है कि पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की सम्भवत: सभी पूर्ण-अपूर्ण कहानियों का संग्रह रूप प्रदान कर प्रकाशित किया जावे। पूर्व की रिक्तता पूर्ण होने से हिन्दी साहित्य के विद्यार्थियों, पाठकों को निश्चित रूप से लाभ प्राप्त होगा।

जैसा कि पूर्व में उल्लेख किया जा चुका है पण्डित गुलेरी ने कहानियों के अलावा लेख, टिप्पणी, संस्मरण, भेंटवर्ता इन्टरव्यू सम्पादन, शोध रिर्पोट, अनुवाद, जीवनी आदि की भी व्यापक स्तर पर रचना की थी जो तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती थी। इस सबसे ऊपर पण्डित गुलेरी एक उच्च कोटि के समीक्षक भी थे। उनकी समीक्षाओं का अपना एक स्तर व मुकाम होने के कारण प्रमाण स्वरूप मानी जाती थी क्योंकि पण्डित जी की समीक्षा पूर्णत: वैज्ञानिक आधा लिए तटस्थ व निर्णायक होती थीं तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं के उल्लेख सहित पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के कृतित्व का विवरण प्रस्तुत है-

कहानी-1. समालोचना, सन् 1906, धर्मपरायण रींछ 2. भारत मित्र में, सन् 1911, सुखमय जीवन 3. पाटली पुत्र में, सन् 1914 बुद्धू का काँटा 4. सरस्वती मे, सन् 1915, उसने कहा था 5. वेश्योपकारक में, सन् 1904, घण्टाघर 6. जनसत्ता दैनिक में, सन् 1987, हीरे का हीरा

लेख-शुन: शेप की कहानी, यूरोपियन संस्कृति 'श्री राघवेन्द्र' महर्षि च्यवन का रामायण, अधिकार चर्चा, क्या संस्कृत हमारी भाषा थी? सुकन्या की वैदिक कहानी, वेद में पृथ्वी की गति, वंग का भंग, आत्मघात, कालिदास के समय में हूण, पाणिनी की कविता जोड़ा हुआ सोना, पुराण प्रसंग, पृथ्वीराज विजय महाकाव्य, धर्मसंकट, चारण, चारणों और भाटों का झगड़ा, अवन्ती सुन्दरी, वंशच्छेद, मीरांबाई, सोत्रामणी का अभिषेक, हिन्दी में अनुवादकर्त्ता सोऽहम्, विवाह की लाटरी, यूनानी प्राकृत, राजसूय, बौद्धों के काल में भारतवर्ष, देवानां प्रिय, पुरानी पगड़ी, अश्वमेध, पंच महाशब्द, पूर्णपात्र आदि प्रसिद्ध लेख है।

शोध लेख-जयसिंह प्रकाश, विक्रमोर्वशी की मूल कथा-12

निबन्ध-काशी की नींद और काशी के नूपुर आँख, देवकुल, धर्म और समाज, अमंगल के स्थान में मंगल शब्द, डिंगल, संस्कृत की

टिपकारी, मारेसि मोहिं कुठाऊँ। **टिप्पणी**-पोथी पढ़-पढ़ जग मुआ, दूध के पैगम्बर, अक्ल बनाम नस्ल, गोसाई तुलसीदास जी के रामचरित मानस और संस्कृत-कवियों का बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव-1,2, आर्य हिन्दी, नौरंगशाह के नौ रंग, पुत्कार-पुकारना, यूनिवर्सिटी बिल, ब्रह्मचारी को पान खिलाना, श्री श्री श्री श्री, हिन्दी साहित्य, कस्तुरी मृग, खोज की खाज, धर्म के शत्रु, झख मारना, बेसिर की हिन्दी रंग की दुदंगी, बनारसी ठग, महर्षियों की वृष्टि, संस्कृत प्रेम, स्वदेशी वस्त्र, वैदिक भाषा में प्राकृतपन, हूण, अधिक सन्तति होने पर स्त्री का पुनर्विवाह , बालहंस की सुभाषित मुक्तावली और चन्द की षष्ट्भाषा, घड़ी के पुर्जे, खट्ट, विवाह की लाटरी, लायलपुर के बछड़े, मेंढकों की टाई, विलायती राजनीति, भिक्षा के कण आदि प्रसिद्ध टिप्पणियाँ है। उपर्युक्त विवरण के अलावा पण्डित गुलेरी ने संस्कृत साहित्य में भी विभिन्न लेख, कविता आदि लिखकर विपुल योगदान दिया है इसी भाँति अंग्रेजी भाषा में भी पण्डित गुलेरी ने विभिन्न लेखों का सृजन किया एवं ग्रन्थों का सम्पादन भी किया। पण्डित गुलेरी द्वारा सम्पादित विभिन्न महत्त्वपूर्ण शोध ग्रन्थ आज अन्वेषकों का मार्ग प्रशस्त कर रहे हैं। निष्कर्ष: पण्डित गुलेरी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। हमने यहाँ संक्षेप में पण्डित गुलेरी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का किंचित उल्लेख करने का प्रयास किया है। विशेषत: हम पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा रचित कहानियों पर विस्तृत रूप से चर्चा करने का उद्यम करेंगे। जैसा कि विदित है कुछ समय पूर्व पण्डित गुलेरी की मात्र तीन कहानियाँ ही उपलब्ध थीं लेकिन विभिन्न विद्वानों एवं शोधार्थियों के प्रयास से आज उनके द्वारा लिखित कुल 6 कहानियाँ हमारे समक्ष हैं। यदि हम इन कहानियों के रचनाकाल क्रम पर दृष्टिपात करते हैं तो ज्ञात होता है कि घण्टाघर उनकी प्रथम प्रकाशित कहानी है। जैसाकि स्वयं गुलेरी जी ने स्वीकार किया है- उक्त रचना कार्लाइल से प्रेरित है। एक लम्बे अन्तराल के मध्य विभिन्न शोधार्थियों ने पण्डित गुलेरी की कहानियों पर अन्वेषणात्मक लेख लिखे हैं, जिनके माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि पण्डित गुलेरी की कहानियों की पृष्ठभूमि अंग्रेजी, संस्कृत, धार्मिक, पौराणिक ग्रन्थों के अलावा लोककथा एवं साहित्य आदि का आधारित है। अथवा उनकी कुछेक कहानियों में पण्डित गुलेरी के जीवन की स्पष्ट अभिव्यक्ति का उल्लेख है। यदि अन्वेषणकर्त्ताओं के निष्कर्ष पर विचार करें तो पण्डित गुलेरी की समस्त कहानियों पर मौलिक न होने की सूईयाँ ठहरती है। पूर्व में जैसा कि घण्टाघर कहानी के विषय में उल्लेख किया जा चुका है कि उक्त कहानी कालाईल से प्रेरित है। 'बुद्धु का काँटा' कहानी स्पष्ट रूप से अंग्रेजी कहानी लेखक ऐन्टनी ट्रोलोप द्वारा रचित कहानी मलाशीज कोव एवं कांगड़ा घाटी मे प्रचलित स्थानीय लोककथा 'भौंदू' का हिन्दी रूपान्तर है। 'सुखमय जीवन' में व्यक्तिग चित्रणों की भरमार होने के कारण कहानी कम संस्मरण अधिक जान पड़ती है।

समीक्षकों ने उपर्युक्त कहानियों पर जो भी टीका-टिप्पणी की हैं वे सहनीय स्तर तक अवश्य हैं किन्तु उसने कहा था कहानी का मूल भी अंग्रेजी कथा साहित्य से सीधे जुड़ा हुआ बताकार शोधार्थियों ने अवश्य ही एक साहसिक कार्य किया है। इस कहानी की पृष्ठभूमि का उल्लेख करते हुए अनुवादक आदित्य प्रकाश गुप्त ने स्वेट मार्टन द्वारा रचित आर्किटेक्ट्स ऑफ फेट का हिन्दी अनुवाद 'भाग्य निर्माण' पुस्तक रूप में करते हुए कहा है कि पण्डित गुलेरी ने 'संसार में सर्वोत्कृष्ट कार्य' शीर्षक से प्रकाशित रचना का हिन्दीकरण करते हुए उसमें पंजाब प्रान्त की एक सत्य घटना पर आधारित अंशों को और सम्मिलित कर लिया है। लेकिन यहाँ पर उल्लेख करना समीचीन होगा कि प्रचलित सत्य कथा के पात्रों के नाम एवं कथानक की बुनावट साक्षात रूप से 'उसने कहा था' कहानी के कथानक से मेल नहीं खाती। लेकिन फिर भी इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि उक्त कहानी का प्लेटफार्म यह पंजाबी सत्य कथा ही है। कहानी के ताने-बाने एवं कसावट से पण्डित गुलेरी की पाण्डित्यता झलकती है। इसलिए हिन्दी साहित्य में उसने कहा था कहानी कालजयी हो गई है। 'घण्टाघर' कहानी का प्रारम्भ ही मनुष्य की अन्धानुकरण प्रवृत्ति पर प्रहार करते हुए होता है। मनुष्य में अन्धानुकरण की प्रवृत्ति शेष सभी प्राणियों से अधिक है, भेड़ तो बेचारी नाहक ही बदनाम है। द्वितीय, उक्त कहानी पौराणिक कहानी कहने की विधा का अनुकरण करते हुए आगे बढ़ती है। कहानी में धार्मिक पाखण्डता, अन्धविश्वास, मिथ्या आश्वासन-श्रद्धा के साथ ही पुण्य-मोक्ष प्राप्त करने की तीव्र उत्कण्ठा का दुष्परिणाम दिखाया गया है। ब्राह्मणों के कुचक्रों, साधु-सन्यासियों की पंगु मानसिकता के कारण हिन्दू धर्मावलम्बियों की मार्मिक स्थिति का बड़ा ही सटीक वर्णन प्रस्तुत किया है-

''कहना न होगा, आने वालों के विश्राम के लिए धर्मशालाएँ, कूप और तड़ाग, विलासों के लिए शुण्डा और सूणा, रमणिएँ और आमोद जमने लगे और प्रतिवर्ष जैसे भीतर जाने की योग्यता घटने लगी, बाहर रहने की योग्यता और इन विलासों में भाग लेने की योग्यता बढ़ी। उस भीड़ में ऐसे वेदान्ती भी पाए जाने लगे जो दूसरे की जेब को अपनी ही समझकर रुपया निकाल लेते। कभी-कभी ब्रह्मा एक ही है उससे जार और पति में भेद के अध्याय को मिटा देने वाली अद्वैतवादिनी और स्वकीया-परकीया के भ्रम से अवधूत-विधूत सदाचारों को शुद्ध द्वैत (झगड़ा) के कारण रक्तपात भी होने लगा।''

'घण्टाघर' कहानी में व्यंग्य की तीक्ष्णता व खंजर दुधारी धार समाहित है जो हिन्दू धर्म, रीति, परम्पराओं की बखिया उधेड़ने में अग्रणी है। मूल रूप से कहानी में समय को पहचानने का संदेश समाहित है। हम समय के तेवर को नहीं समझेंगे तो निश्चित रूप से विनाश को गर्त में समा जायेंगे। अत: हमें मिथ्या आडम्बरों की परिधि से बाहर स्वत: ही निकलना होगा। सत्य एवं असत्य में भेद को जानना अपेक्षित है। धर्म का अर्थ विनाश नहीं है अपितु धर्म तो समाज के उत्थान हेतु सदैव तत्पर रहता है किन्तु संवाहकों की चाल, गति पर अंकुश लगाना होगा। सफेद एवं स्वच्छ बाह्य आवरण धारी ऐसे धर्माधिकारी जो निहायत स्वार्थी, लौलुप, आत्मकेन्द्रित एवं अन्धानुकरण प्रवृत्ति के संवाहक हैं निश्चित रूप से अपेक्षित करने की आवश्यकता है क्योंकि धर्मस्थानों पर अनाचार, व्यभिचार एवं अपनी विकृत मानसिकता को सन्तुष्ट करके धर्म को नाहक की कलंकित कर रहे हैं जबकि न तो वे धर्म की परिभाषा से भिज्ञ है एवं न ही वे धर्मस्थलों की पवित्रता के विषय में ही जानते हैं। धर्म वह है जो अहं का विनाश करके धैर्य प्रदान करे। जो पूर्व के धैर्य को ही खण्डित करे उसे धर्म कत्तई नहीं कहा जा सकता। हमें धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक आडम्बरों के चंगुल से सजग रहना होगा। यह आडम्बर मिथ्या, अन्धकार एवं फरेब का प्रतीक है जबकि धर्म की देह में विकास, उन्नति, कल्याण एवं प्रकाश की मनोहारी छटा एवं स्वपनिल किरणें समाहित हैं जो सदैव मनुष्य एवं समाज की भलाई एवं उन्नति चाहती हैं। यद्यपि 'धर्मपरायण रींछ' कहानी को विद्वान मौलिक कथा की श्रेणी में नहीं रखते। इसका आधार महाभारत मानते हुए कुछके विद्वान समीक्षक तो इसे पौराणिक विषय पर रचित निबन्ध मानते हैं किन्तु अधिकतर विद्वानों

ने इसे कहानी ही माना है। पौराणिक कथा के आधार के पश्चात भी 'धर्मपरायण रींछ' स्वयं में अभिन्न, उत्कृष्ट, संवेदनशील एवं मार्मिक मौलिक कथा मानी जा सकती है। उक्त कहानी समस्त मापदण्डों एवं कसौटी पर खरी उतरती है। कथा का प्रारम्भ ही 'सायंकाल' शब्द से होता है। पक्षी एवं हिसंक पशुओं की प्रवृत्ति के उल्लेख से भारतीय एवं पाश्चात्य मानव प्रकृति, सोच एवं चिंतन का अभास होता है। भारतीयों की अतिथि देवो भव: वाली मानसिकता एवं असुरी चक्रव्यूही सोच का विस्तार पूर्वक वर्णन हुआ है। कहानी में बताया गया है कि अंग्रेज किस जीर्ण-शीर्ण अवस्था में हमारे यहाँ आए थे। यह जानते हुए कि यह अति हिंसक एवं लौलुप हैं, के उपरान्त भी हमने उनको अतिथि स्वरूप स्वीकारा और अन्त तक अपनी खाल नुचवाते रहे, लेकिन......। कहानी में समाहित संदेश भारतीय सभ्यता-संस्कृति की सरलता एवं सहिष्णुता का प्रतिनिधित्व करता है। ज्ञान के साथ-साथ मूल्यांकन की क्षमता एवं चिन्तन कर उचित निर्णय लेने का साहस होने की अवस्था की ओर भी कहानी हमारा ध्यान आकृष्ट करती है। कहानी में सम्मिलित संस्कृत श्लोक पण्डित गुलेरी के गहन अध्ययन की ओर संकेत करते हैं। पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्वारा रचित अगली कहानी 'सुखमय जीवन' का कथानक नितान्त सामाजिक, विशेषत: पारिवारिक है। कहानी का कथानक एक ऐसे अविवाहित युवा लेख के चारों और घूमता है जिसने हाल ही में विधि की परीक्षा दी है। परीक्षाफल के विषय में विचार करते-करते उसका जी उचाट हो जाता है और वह अपनी साईकिल लेकर अपने मित्र के गाँव कालानगर की ओर निकल पड़ता है। मित्र का गाँव नायक के घर से लगभग 15 मील दूर स्थित है।

सामान्य परिचय के पश्चात् ही लेखक ने हिन्दू समाज में व्याप्त कुरीतियों पर गहरी व सुदृढ़ चोट की है। बाल-विवाह जैसे अभिशाप फलने-फूलने का अवसर हमारा हिन्दू समाज ही देता है। ऐसी धूमिल व मानव विरोधी परम्पराओं के चलते हिन्दू समाज जर्जरावस्था में पहुँचा चुका है। हमें ऐसी समस्त कुरीतियों का निषेध करना होगा- ''मित्र महाशय मेरे साथ-साथ डिबेरिंग क्लबों में बाल-विवाह और माता-पिता की जबरदस्ती पर इतना व्याख्यान झाड़ चुके थे कि अब मारे लज्जा के साथियों में मुँह नहीं दिखाते थे। क्योंकि पिताजी के सामने चीं करने की हिम्मत नहीं थी। व्यक्ति विचार से साधारण विचार उठने लगे। हिन्दू समाज ही इतना सड़ा हुआ है कि हमारे उच्च विचार कुछ चल ही नहीं सकते। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। हमारे सद्विचार एक तरह के पशु हैं जिनकी बलि माता-पिता की जिद और हठ की वेदी पर चढ़ाई जाती है। --- भारत का उद्धार तब तक नहीं हो सकता-।'' लेखक ने सर्वप्रथम घर की इकाई से ही परिवर्तन करने का आह्वान किया है। यदि माता-पिता अपने बच्चों का विवाह युवा होने के पश्चात् करने की ठान लें तो स्वत: ही यह बाल विवाह रुक सकता है। यह एक सामाजिक अभिशाप है जिसे हम स्वयं स्वत: ही वरण करते हैं। कैसी विडम्बना है? और फिर एक परिवर्तन की ओर संकेत करते हुए लेखक ने लिखा है- ''फिस्सस! एकदम अर्श से फर्श पर गिर पड़े। बाइसिकल की फूँक निकल गयी। कभी गाड़ी नाव पर, कभी नाव गाड़ी पर।'' एक ऐसा क्रान्तिकारी युवा लेखक जो यद्यपि अविवाहित है लेकिन अपनी कल्पनाशीलता द्वारा दाम्पत्य जीवन पर एक पुस्तक सुखमय जीवन की रचना करता है जिसमें पति-पत्नी एवं परिवार की ऐसी आचार संहिता का उल्लेख है जिनकी पालना के अनुरूप सुखमय जीवन व्यतीत किया जा सकता है लेकिन समस्त निर्णयों की चाबी एवं समाज पर आधिपत्य बड़े-बुढ़ों का होने के कारण किसी भी परम्परा का निषेध करना अथवा अपेक्षित परिवर्तन करना युवा वर्ग के हाथ में नहीं है। यहाँ लेखक ने साइकिल में पंचर होने की बात कहके हमारी सामाजिक स्थिति का सटीक चरित्र चित्रण कर डाला है। चूँकि हमारा समाज ही पंचर है अत: युवा रूपी साइकिल भला कैसे चल सकती है। लेखक का इस प्रकार व्यंग्यात्मक सटीक बिम्ब खींचना प्रासंगिक एवं सार्थक है जो एक आमूल-चूल परिवर्तन की ओर संकेत करता है।

कहानी के मध्यभाग में सेवानिवृत्त ब्रह्मसमाजी गुलाबराय वर्मा की विशेष भूमिका है। पुन: लेखक ने तीक्ष्ण कटाक्ष किया है। यद्यपि गुलाबराय शिक्षित सेवानिवृत वृद्ध हैं किन्तु संस्कारवश वह धार्मिक पाखण्डों, कुठित परम्पराओं से उबर नहीं पाता। गुलाबराय वर्मा दो पाटों के मध्य फंसे प्रतीत होते हैं- ''मैं गुलाब राय वर्मा हूँ। पहले कमसेरियट में हेड क्लर्क था। अब पेन्शन लेकर इस एकान्त स्थान में रहता हूँ। दोगौ रखता हूँ और कमला तथा उसके भाई प्रबोध को पढ़ाता हूँ। मैं ब्रह्म समाजी हूँ, मेरे यहाँ परदा नहीं है। कमला ने हिन्दी मिडिल पास कर लिया है। हमारा समय शास्त्रों के पढ़ने में बीतता है। मेरी धर्मपत्नी भोजन बनाती और कपड़े सी लेती है, मैं उपनिषद् और योग वासिष्ठ का तर्जुमा पढ़ा करता हूँ। स्कूल में लड़के बिगड़ जाते हैं, प्रबोध को इसीलिए घर पर पढ़ाता हूँ।'' उपर्युक्त कथन से ज्ञात होता है कि शिक्षित किन्तु एकाकी प्रवृत्ति वाला व्यक्ति सामाजिक उत्थान में कदापित सहयोगी नहीं बन सकता। द्वितीय हमारी कुछ पौराणिक पोथियों में तत्कालीन समाज के नियमों का उल्लेख है जो भविष्य के समाज एवं उसके नियमों से कभी भी मेल नहीं खाते किन्तु धार्मिक कट्टरता एवं अन्धविश्वास के परिणाम स्वरूप व्यक्ति जागरूक होने के पश्चात् भी उस पौराणिक विचारधारा को तिलांजलि नहीं दे पाता। इसलिए एक ओर तो विनाशकारी परम्पराएँ जीवित रहती है दूसरी ओर हमारी मानसिक चिन्तन प्रक्रिया पूर्वत: ही बनी रहती है।

दूसरी नवयुवती कमला की बेबाकी एवं जागरुकता आज के समस्त नवयुवकों का प्रतिनिधित्व करती है। यद्यपि कमला ने मिडिल ही उत्तीर्ण किया है लेकिन अपनी पाठ्यपुस्तकों के अलावा उसे अन्य लाभकारी पुस्तकों का भी ज्ञान है अर्थात् वह समय के साथ चलने वाली है। जैसे ही नायक अपना नाम बताता है नायिका कमला तुरन्त उसे ग्रन्थकार के रूप में पहचान लेती है और अपने घर ले आती है। यहाँ घर ले आने का आसय आवश्यक परिवर्तनों को स्वीकारने से लगाया जा सकता है। वास्तविकता से सदैव किनारा करके मिथ्या जीवनयापन की प्रवृत्ति का शिकार मनुष्य जीवन भर एक छलावे का शिकार रहता है- ''वेश्या अपनी अवस्था कम दिखाना चाहती है और साधु अपनी अवस्था अधिक दिखाना चाहता है। भला, ग्रन्थकार का पद इन दोनों में किसके समाज है?'' पुस्तकीय व्याख्या, ज्ञान एवं वास्तविकता में जमीन-आसमान जैसा अन्तर होता है। घर-गृहस्थी की वास्तविकता से भिज्ञ कमला की माँ ने तो पूर्व में ही 'सुखमय जीवन' कृति पर कपोल कल्पित होने की बात कह दी थी। आखिर उसका आज खुलासा हो ही गया। सत्यता, यथार्थ की परिधि एवं परिवेश के मध्य जितना एक स्त्री आत्मसात होती है शायद पुरुष उतना ही अनभिज्ञ रहता है। प्रारम्भ से स्त्री का प्रारब्ध ही ऐसा होता है। विश्वास की समस्त सीमाओं को खंडित करते हुए नायक जयदेवशरण वर्मा ने नायिका कमला का हाथ पकड़ लिया और प्रणय निवेदन कर डाला, जिसे सुनकर कमला सुन्न रह गई उसका विश्वास ताश के पत्तों

की मानिंद ढहने लगा, हृदय में ग्लानि उत्पन्न हो चली- ''आपको ऐसी बातें कहते लज्जा नहीं आती? धिक्कार हैं आपकी शिक्षा को और धिक्कार है आपकी विद्या को!'' यहाँ पाश्चात्य एवं शहरी प्रवृत्ति के दुष्परिणामों को उजागर किया गया है। भला वो शिक्षा या विद्या ही क्या जिसमें छलावा हो, आडम्बर एवं मिथ्या हो। पढ़ने के साथ गुणना भी आवश्यक है। आगे नायिका नायक को प्रताड़ित करते हुए कहती है- ''इसी को आपने सभ्यता मान रखा है कि अपरिचित कुमारी से एकान्त ढूँढकर ऐसा घृणित प्रस्ताव करें। तुम्हारा यह साहस कैसे हो गया। तुमने मुझे क्या समझ रखा है? 'सुखमय जीवन' का लेखक और ऐसा घृणित चरित्र! चूल्लू भर पानी में डूब मरो। अपना काला मुँह मत दिखाओ।'' उक्त अंश ही वास्तव में कहानी का मर्म व संवेदना केन्द्र है। यहाँ एक पंक्ति की विशेष महत्ता है-''सुखमय जीवन का लेखक और ऐसा घृणित चरित्र।'' लेखक ने बुद्धिजीवि समाज को सावधान होने की चेतावनी देते हुए संदेश दिया है कि आप अपनी अल्प बुद्धि के प्रभाव से किसी मासूम को छलने का प्रयास कदापि न करो। इसी भाँति का उल्लेख 'घण्टाघर' कहानी में भी हुआ है-

'उस भीड़ से ऐसे वेदान्ती भी पाए जाने लगे जो दूसरों की जेब को अपना ही समझकर रुपया निकाल लेते।' 'घण्टाघर, धर्मपरायण रींछ' के कथानक के पश्चात् 'सुखमय जीवन' के कथानक में चिंगारी की तपिस व आक्रोश परिलक्षित हुए है। 'घण्टाघर' कहानी जहाँ सामाजिक, धार्मिक अन्धविश्वासों के मध्य मानव को पीसती प्रतीत होती है वहाँ धर्मपरायण रींछ में हमारे पौराणिक ग्रन्थों के दुष्प्रभावों का उल्लेख है। चूँकि अब भारत में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के कारण जागरूकता बढ़ी है जिसके कारण भावी पीढ़ी और अधिक सतर्क, जागरूक व निर्भिक हो गई है। वह परम्पराओं, रिवाजों को एक निश्चित सीमा तक ही मान्यता देती है। नायिका के इस संवाद से आज की नवयुवक पीढ़ी की मानसिकता का सहज ही परिचय मिलता है- ''देखा मेरा सुखमय जीवन! आस्तीन के साँप। पापात्मा! मैंने साहित्य सेवी जानकर और ऐसे उच्च विचारों का लेखक समझकर तुझे अपने घर में घुसने दिया और तेरा विश्वास और सत्कार किया।''

इसके पूर्व 'धर्मपरायण रींछ' में शुद्ध पौराणिक भारतीय मानसिकता के दर्शन होते हैं। दुश्मन यदि अतिथि के रूप में घर पधारता है तो हमें उसका आदर सत्कार करना चाहिए। चाहे वह हमें हानि ही क्यों न पहुँचाये लेकिन उसका प्रतिरोध नहीं करना चाहिए। किन्तु 'सुखमय जीवन' की नायिका कमला एक शिक्षित बाला है। उसकी विशेषता यह है कि वह भारतीय संस्कृति, सभ्यता का पालन करते हुए आधुनिक शिक्षा के नियमों का भी पालन करती हुई आगे बढ़ती है। इसीलिए वह नायक को संस्कृत में प्रचलित गालियों से सम्बोधित कर वास्तविता से परिचय कराती प्रतीत होती है- ''प्रच्छन्नपापिन्! वकदाम्भिक! बिड़ालव्रतिक! मैंने तेरी सारी बातें सुन ली हैं।'' नायिका द्वारा प्रयुक्त इन अपमान सूचक शब्दों से स्पष्ट है कि बौद्धिक उन्नति से अधिक महत्वपूर्ण चारित्रिक एवं नैतिक विकास है। शिक्षा का अर्थ है सर्वांगीण विकास। मात्र सर्टीफिकेट या डिग्री प्राप्त करना ही अनिवार्य या अपेक्षित नहीं होता। द्वितीय, कहानी का उपसंहार, जिसने हमारी जर्जर पौराणिक व्यवस्थाओं का कारण हमारी कल्पित पोथियों को बताया है, जिसमें वर्णित समस्त प्रसंग वास्तविकता से कोसों दूर हैं किन्तु समाज के कुछ ठेकेदारों ने समस्त समाज को दिग्भ्रमित कर चक्रव्यूह में फँसा दिया है जहाँ से बाहर निकलने के लिए न तो मनुष्य उद्यम करता है और न ही षड़यन्त्रकारी उसे आसानी से निकलने ही दे रहा है। वही ग्रन्थ या पोथी श्रेष्ठ है जो मानव व समाज के लिए लाभकारी हों। वास्तविकता एवं कल्पना का कहीं कोई मेल नहीं होता। कल्पना में ऐसी रंगीनियाँ समाहित होती हैं जो आधारविहिन, पंखविहिन होती हैं। पोथियों में अक्सर ऐसी घटनाओं को इसलिए सम्मिलित किया जाता है ताकि पाठक बंधा रहे। किन्तु पाठक उसे सारस्वत सत्य मान बैठता है जिसके परिणाम स्वरूप समाज में एक विकृति उत्पन्न हो जाती है- नायक ने ऐसी पोथियों एवं कल्पनाओं का पुरजोर खण्डन किया है- ''भाड़ में जाए 'सुखमय जीवन! उसी के मारे नाक में दम है!!'' ''चाचाजी उस निकम्मी पोथी का नाम मत लीजिए। बेशक, कमला की माँ सच्ची हैं। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक पहचान सकती हैं कि कौन अनुभव की बातें कर रहा है और कौन गप्पे हाँक रहा है। आपकी आज्ञा हो, तो कमला और मैं दोनों सच्चे सुखमय जीवन को आरम्भ करें। दस वर्ष पीछे मैं जो पोथी लिखूँगा। उसमें किताबी बातें न होंगी, केवल अनुभव की बातें होंगी।'' निष्कर्षत: हमें अपने सच्चे व सरल जीवन, हेतु कल्पना व काल्पनिक आधारों से निषेध करना होगा अन्यथा हमारी जिंदगी, हमारा समाज एक फेंटेसी बनकर रह जाएगा। कुछ पौराणिक पोथियों को चाहे कितनी भी पवित्र धार्मिक मान्यता प्राप्त हो चुकी है किन्तु उन पोथियों में उल्लेखित काल्पनिक अंशों की पहचान करनी होगी तभी हम एक सच्चे मानव का सच्चा जीवन जी पायेंगे। वैमन्यष्यता, बुराई को समाप्त करने का एकमात्र उपाय मिथ्या व आडम्बरपूर्ण व्याख्यानों, आख्यानों, काल्पनिक स्थितियों, रीति-रिवाजों, परम्पराओं आदि से परहेज करना होगा। पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की अगली कहानी 'बुद्धू का काँटा' एक लम्बी कहानी है। इस कहानी को लेखक ने सात भागों में विभाजित किया है। प्रथम भाग, कहानी का प्रारम्भ व्यंग्य प्रहार से होता है। हिन्दी भाषा के भाषा शास्त्रियों पर तीखा प्रहार करते हुए गुलेरी जी ने उनकी कलई खोलकर रख दी है कि जो व्यक्ति स्वयं शुद्ध बोल न पाता हो वो भला दूसरों की भाषा में अशुद्धता ढूँढने का नैतिक अधिकार कैसे रख सकता है? निश्चित रूप से श्री गुलेरी जी के साथ ऐसी घटना घटित हुई होगी जिससे आघातित गुलेरी जी अपने मनोभावों को व्यक्त करने से रुक नहीं सके। क्योंकि उन्होंने स्पष्ट रूप से 'हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के सभापति' का अशुद्ध उच्चारण हेतु उल्लेख किया है। कहानी का प्रारम्भ द्वितीय गद्यांश से होता है। आगरा के 'बुझातिया बैंक' के मैनेजर पद पर कार्यरत रघुनाथ प्रसाद त्रिवेदी के पिता मूलत: दारसूरी नायक पहाड़ी क्षेत्र के निवासी थे।

कहानी में मैनेजर साहब के चरित्र में ठोस चरित्र के सुलभ दर्शन होते हैं। उन्होंने अपने पुत्र को शिक्षा हेतु प्रयाग भेज रखा है किन्तु रघुनाथ प्रसाद को बचपन से ही ऐसे संस्कार एवं परिवेश मिला है कि प्रयाग शहर में रहते हुए भी वह आधुनिक चकाचौंध से अनभिज्ञ हैं। कहानी जैसे-जैसे आगे बढ़ती है विभिन्न सामाजिक कुरीतियों पर प्रहार करती है। बाह्य आडम्बरों एवं दिखावे पर व्यंग्य करते हुए लिखते हैं- ''बाबू बड़े सीधे, अपने सिद्धान्तों के पक्के और खरे आदमी हैं जैसे पुराने ढंग के होते हैं। बैंक के स्वामी इन पर इतना भरोसा करते हैं कि कभी छुट्टी नहीं देते और बाबू काम के इतने पक्के हैं कि छुट्टी माँगते नहीं। न बाबू वैसे कट्टर सनातनी हैं कि बिना मुँह धोए ही तिलक लगाकर स्टेशन पर दरभंगा महाराज के स्वागत को जाएँ और न ऐसे समाजी ही कि खंजडी लेकर 'तोड़ पोपगढ़ लंभा का' करने दौड़ें। उसूलों के पक्के हैं।'' लेखक ने कहानी के इस गद्यांश में बाबू त्रिवेदी के माध्यम से समस्त ढोंगी-पाखण्डी एवं छल कपट से

पूर्ण ऐसे ब्राह्मणों पर चोट की है जो नाहक ही लोगों को अपने वाह्य दिखावे से ठगते हैं। बाबू त्रिवेदी के माध्यम से लेखक ने सन्देश दिया है-''कर्म ही धर्म है। कर्म ही पूजा है, समाज है, ईश्वर है, अन्नदाता है।'' बाबू त्रिवेदी ने खोखले एवं अपूर्ण किताबी ज्ञान पर कड़ी आपत्ति प्रकट की है। आजकल मात्र कुछ पुस्तकों को पढ़कर बी.ए, एम.ए की उपाधियाँ मिल जाती हैं। किन्तु उस छात्र का ज्ञान अपूर्ण एवं स्तरहीन होता है यह आधुनिक शिक्षा प्रणाली का दोष है। बाबू त्रिवेदी के अगले उसूल का जिक्र करते हुए लेखक ने इस कहानी में पुन: बाल-विवाह पर प्रतिबन्ध हेतु विरोधी स्वर मुखरित ही नहीं किया अपितु उदाहरणस्वरूप अपने पुत्र का विवाह उचित समय पर ही करने का निर्णय करते है। यहाँ तक कि उनकी पत्नी की बात को भी वे नहीं मानते किन्तु---। चूँकि मनुष्य सामाजिक प्राणी है। और जब समाज उसे समाज में च्यूत करने की घोषणा या डर दिखा दे तो एक अदद जागरूक मनुष्य अन्त में सामाजिक कुरीतियों को स्वीकार करने हेतु सहमत हो जाता है। गुलेरी जी ने समस्त सामाजिक कुरीतियों एवं व्याधियों की जड़ शातिर ब्राह्मणों को माना है साथ ही अशिक्षा भी इसमें तेल का काम साधती है। ''दारसूरी से भैया की चिट्‌ठी आई है। बहुत कुछ बातें लिखी है। कहा हैं कि तुमतो परदेशी हो गए। यहाँ चार महीने बाद बृहस्पति सिंहस्थ हो जाएगा, फिर डेढ-दो वर्ष तक ब्याह नहीं होंगे। इसलिए छोटी-छोटी बच्चियों के ब्याह हो रहे हैं, बृहस्पति के सिंह के पेट में पहुँच से पहले कोई चार-पाँच वर्ष की लड़की कुँवारी नहीं बचेगी। फिर जब बृहस्पति कहीं शेर की दाढ़ में से जीता-जागता निकल आया तो न बराबर का घर मिलेगा न जोड़ की लड़की। तुम्हें क्या है, गाँव में बदनाम तो हम हो रहे हैं। मैंने अभी दो-तीन घर रोक रखे हैं। तुम जानो, अब के मेरा कहना न मानोगे तो मैं तुमसे जन्म भर बोलने का नहीं।'' वास्तव में समाज में दिशा निर्देशन का दायित्व ऐसे लौलुप एवं कुटिल लोगों के हाथों में है जो अपना स्वार्थ साधने हेतु कोई भी सामाजिक अपराध करते नहीं अघाते। पोथी-पत्राधारी पण्डित-ज्योतिषी, लोगों को ऐस भयाक्रान्त कर देते हैं कि सारी अव्यवस्थाओं का वर्चस्व स्थापित हो जाता है। यहाँ बृहस्पति 'ज्ञान' का एवं सिंह 'अज्ञानता, उद्दण्डता एवं विनाश' का प्रतीक है। अपरिपक्वावस्था में शादी होने से लड़का एवं लड़की पूर्ण विकास नहीं कर सकते। नौजवान ही समाज का भविष्य होते हैं। मनुष्यों से ही समाज की संरचना होती है। अत: जिस समाज के लोगों की शारीरिक, मानसिक स्थिति सुदृढ़ नहीं होगी तो भला वो समाज कैसे उन्नति कर सकता है? किन्तु सामाजिक ठेकेदार तो मात्र अपने स्वार्थ को सिद्ध करने में क्रियाशील रहते हैं। उन्हें समाज, राज्य या राष्ट्र के विकास से कोई लगाव या सरोकार नहीं होता। ऐसे लोग मरघट में भी रसगुल्ले खा लेते हैं। अपाहिज से दान स्वरूप बैशाखी माँग लेते हैं। ऐसे धूर्त व्यक्तियों से सावधान रहने की आवश्यकता है। कहानी के दूसरे खण्ड में धर्म के अन्धानुकरण को बड़े ही मार्मिक ढंग से उठाया गया है। धर्म की सच्चाई तो इसी में होनी चाहिए कि वह मनुष्य का भला करे, आगे बढ़ाये। रही बात ईश्वर की तो वह तो सर्वव्यापी है, कण-कण में उसके नूर को महसूस किया जा सकता है। सबसे पुण्य कर्म गृहस्थ धर्म निबाहने का है फिर भला यकायक घर-बार छोड़ असामर्थ्य स्थिति में किसी विशेष पवित्र स्थान पर जाया जाये तो क्या यह उचित है? वो स्थान जो शुद्ध रूप से ईश्वर के निवास स्थान के रूप में मान्यता प्राप्त है, क्या वहाँ दु:ख, तकलीफ, गरीब, मजलूम या अन्य सांसारिक व्याधियाँ, कठिनाईयाँ नहीं है? धर्म की ऐसी ही पोल-पट्‌टी को खोलता एवं उसके अन्धकार पक्ष पर प्रकाश प्रेषित करता यह खण्ड एक गरीब मुसलमान की करूण कथा कहता है जो पूर्व में अपने गृहस्थ जीवन का निर्वाह करते हुए एवं धार्मिक नियमों का पालन करते हुए जीवनयापन करता रहता था। हज यात्रा की मानसिकता के परिणामस्वरूप सारी घर-गृहस्थी उजड़ गई, खेत-खलीहान चले गए। हश्र यह हुआ कि टट्‌टू हाँकने को मजबूर हो गया। कहानी के उक्त अंश में एक कटु सत्य अंश समाहित है जो संदेश देता है कि हमें परिश्रम, हिम्मत से अपने कार्यों को पूर्ण करते हुए ईश्वर को याद रखना चाहिए। कण-कण का वह स्वामी है तो भला हमें भटकने की क्या आवश्कयता है?

वास्तव में, कहानी 'बुद्ध का काँटा' द्वितीय भाग के पूर्वार्द्ध खण्ड से प्रारम्भ होती है। इससे पूर्व उक्त कहानी से अधिक व्यंग्य रचना अधिक प्रतीत होती है। रघुनाथ अपनी वार्षिक परीक्षा के उपरान्त अपने गाँव लौट रहा है। घराठनी रेलवे स्टेशन पर उतरने के पश्चात् आगे का तीस मील का पहाड़ी रास्ता उसे टट्टू के सहारे पूरा करना है। टट्‌टू मोती और उसका स्वामी इलाही। रास्ते में स्थिति एक गाँव और उस गाँव का एक कुआँ। रघुनाथ को प्यास का अहसास हुआ। वह अपने बक्से में से लौटा-डोर निकालकर कुएँ पर पहुँच गया। वहाँ पहले से ही छह-सात स्त्रियाँ पानी भरने का उद्यम कर रही थीं। प्रयाग के बोर्डिंग में रहने के कारण रघुनाथ को रस्सी के सहारे कुएँ से पानी खींचता नहीं आते देख पनघट पर एकत्रित स्थियों ने रघुनाथ के संग खट्‌टी-मिट्‌ठी नैसर्गिक हँसी-ठिठोली प्रारम्भ कर दी। रघुनाथ इस कहानी का चरित्र नायक। महिलाओं की परनछाई से कोसों दूर रहने वाला युवा। अपने मामा के यहाँ आई किशोरी भागवन्ती, स्वच्छन्द एवं निर्भिक रूप से रघुनाथ से चरमावस्था तक ठिठोली करती है। घर पहुँचने के तीसरे दिन रघुनाथ प्रात: ही भ्रमण हेतु निकलता है। वह नदी की पार पर एक प्राकृतिक घाट पर स्थिति चौड़ी सिला पर पहुँच जाता है। प्राकृतिक सौन्दर्य को निहारते हुए वह सेव करता है। प्रकृति, ईश्वर और मनुष्य तीनों का क्षणिक तुलनात्मक चिंतन करता है कि सामने दूसरी शिला पर भागवन्ती बैठी रघुनाथ के क्रिया-कलाप की मासूमियत पूर्वक नकल उतार रही थी। नायक-नायिका के मध्य काफी शैतानियों के दौर चलते हैं। नायिका-नायक के सौन्दर्य प्रसाधन के सामान को नदी में फेंक देती हैं जिसे नायक निकालने के लिए आगे बढ़ता है तो डुबकियाँ लेने लगता है। नायक की डूबती अवस्था देख नायिका रघुनाथ को निकालने में सफल होती है। तरबतर कपड़ों वाले रघुनाथ के कानों में पनघट पर कहे गये नायिका के शब्द 'इस अनाड़ी के सामने भी कोई अपना लहंगा पसारेगी?' गुंजायमान होने लगते हैं।

शुद्ध वातावरण, पौष्टिक आहार एवं पावन विचारों के कारण ग्रामीण बालाएँ आयु से पूर्व ही युवती दिखने लगती हैं किन्तु उनका मन पावन व अन्त:करण मासूम होता है। वे स्वच्छन्द रूप से चहकती हुई फुदकती, कूदती, हँसती गाती व खाती रहती है। शहरी परिवेश में संग विवाहेत्तर उनका विलाप प्रारम्भ होता है। यहाँ गुलेरी ने ग्रामीण एवं शहरी वातावरण का चित्र प्रस्तुत किया है जिसमें परिवेश, मानसिक, चिन्तन, शौक एवं खानपान आदि का संक्षिप्त किन्तु सटीक तुलनात्मक वर्णन किया है। नायिका के पैर में काँटा चुभ जाता है। नायक द्वारा नायिका के नाक पर मुक्का मारना, नायिका के नाक से रक्त प्रवाहित होना एवं नायिका द्वारा यह कहना वाह! पिराग जी में खूब इलम पढ़ा। स्त्रियों पर हाथ उठाते होंगे। कहानी में परिवर्तन के संकेत के साथ नारी जीवन की मार्मिक कथा को व्यक्त करते हैं। नायक के माध्यम से एक पुरुष चरित्र को, समाज की दुर्बल मानसिकता की श्री गुलेरी जी ने बड़ी

ही पाण्डित्यपूर्ण विधि से व्यक्त किया है–'कचनार की एक बेल आम पर चढ़ हुई थी और आम के तले पत्थरों का थाँवला था। सूनसान था। दूर से नदी की कलकल और रहरहकर खाती–चिड़े की ठकठक–ठकठक आ रही थी।' 'यहाँ कचनार की एक बेल आम पर चढ़ना–स्त्री के कमजोर भविष्य और आश्रित जीवन की ओर इंगित करता है जबकि आम के नीचे क्रूर, बेजान पत्थरों के थाँवले का सन्दर्भ पुरुष के अहंकार एवं दंभ से है। नदी के कलकल स्त्री के स्वभाव को एवं खातीचिड़े की ठकठक पुरुष के वज्र व्यक्तित्व को दर्शाती है। यहाँ विशेष बात यह उभरती है कि नायिका जैसे ही एक ऐसे शहरी परिवेशपूर्ण युवक को देखती है जो स्वभाविक जीवन एवं प्रकृति से पूर्णत: कटा हुआ है, तो उसके हृदय में पीड़ा उभरती है। वह इसे सभ्यता या ज्ञान नहीं मानती अपितु मूर्खता व बुद्धूपन मानती है। नायिका के पैर के तलुवे में चुभे काँटे को नायक एक अन्य काँटे की सहायता से निकाल देता हे। खुद्दार प्रकृति की नायिका किसी की सहायता करने में कोई औपचारिकता नहीं समझती और वह कहती है– 'कोई एहसास थोड़ा है, तुम्हारे भी गड़ जाए तो निकलवाने आ जाना।' यहाँ यह पंक्ति इस कहानी का केन्द्र बिन्दु है। कहानी में संवेदना का प्रसार इसी वाक्य से प्रारम्भ होता है। नायिका काँटे को अपने पास रख लेती है अर्थात् स्त्री की प्रकृति है कि वह बचपन से वृद्धावस्था तक दु:ख एवं कष्टों में अपना जीवन मुस्कराते हुए व्यतीत करती है। पिता के घर में–पिता एवं बड़े भाई, चाचा आदि के दिशा निर्देशन में पलती–बढ़ती है। पुत्रों की तुलना में पुत्रियों के संग दोयम दर्जे का व्यवहार होता है। ससुराल में ससुर, जेठ व देवर के अलावा जीवनभर पति के आदेशानुसार जीती हुई प्रयाण करती है। पुन: लेखक ने कटुसत्य का उल्लेख करते हुए कहा कि पण्डित शास्त्र ज्ञाता या विद्वान नहीं है अपितु वे समस्त–जड़ लोग हैं जिन्हें बाल विवाह निषेध घोषित करने हेतु चाहे जितनी सम्पत्ति–धन आदि दे दो फिर भी वे अर्थ का अनर्थ कर ऐसे समाज विनाशक कार्यक्रमों रुपरेखा बना ही लेंगे। ज्योतिष के अनिष्ट का प्रभाव कन्या पर ही क्यों पड़ता है? पुरुष प्रधान समाज की इज्जत स्त्री को प्रताड़ित करने, कुचलने एवं उसके जीवन को धूमिल करने से ही क्यों बढ़ती है? क्या पुरुष के लिए चरित्रवान होना अनिवार्य नहीं है? स्वतन्त्रता मात्र पुरुष ने ही क्यों हथिया ली? आदि–आदि ज्वलंत प्रश्नों को उठाता यह अंक नायक की सगाई की सूचना के साथ समाप्त हो जाता है।

विवाह की विशेष रस्म के साथ अलग अंक प्रारम्भ होता है। दुल्हन–दुल्हे को देखकर चेतना शून्य हो जाती है। पूर्व में विवाह जैसी विभीषिका से अनभिज्ञ नायिका अब पूर्णत: भिन्न प्रतीत होती है क्योंकि उसके मुखमण्डल पर उभरी पश्चाताप की रेखाएँ एवं उड़ी हवाइयों से अधिक नायक के शिकारी रूप से भयाक्रान्त है। दुल्हे में उसे एक बलिष्ठ अहंकारी एवं दम्भी पुरुष का आभास होता है। खरगोश की भाँति चौकड़ी भरने वाली, मुक्त हिरनी की मानिन्द कुलाचियाँ भरने वाली अल्हड़–स्वतन्त्र बालिका कफस में कैद, परकटे परिन्दे की भाँति तड़पन महसूस कर रही थी। चूड़ियाँ व पायल उसे हथकड़ी एवं बेड़ियों का अहसास दे रहे थे। यहाँ लेखक ने दुल्हन को डोले में एवं रघुनाथ को घोड़े पर बैठा वर्णित कर यह स्पष्ट कर दिया है कि नायिका अब पूर्णत: आश्रित एवं नजरबन्द हो चुकी है। जबकि पुरुष शक्ति एवं ताकत पर सवार हो गया है। इससे नारी की दयनीय स्थिति की अभिव्यक्ति हुई है– ''रघुनाथ घोड़े पर था। दोपहर चढ़ने से कहारों और बारातियों ने एक बड़ की छाया के नीचे बावड़ी के किनाने डेरा लगाया कि रोटी–पानी करके और धूप काट के चलेंगे। दुल्हिन पालकी का पर्दा हटाकर हवा ले रही थी और अपने जीवन की स्वतन्त्रता के बदले में पाई हुई हथकड़ियों और चाँदी की बेड़ियों को निरख रही थी। मनुष्य पहले पशु है, फिर मनुष्य सभ्यता या शांति का भाव पीछे आता है, पहले पाशविक बल और विजय का। रघुनाथ ने पास आकर कहा–'क्या कहा था, ऐसे मर्द के आगे कौन लहंगा पसारेगी?' सिर भीतर करके बालिका ने परदा डाल लिया।'' लेखक ने यहाँ दुल्हन के स्थान पर बालिका शब्द का प्रयोग किया है। जिसमें एक मासूम लड़की के बेकसूर जीवन का सम्पूर्ण इतिहास छिपा हुआ है। किस भाँति क्रूर समाज अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु अबोध बालिकाओं की मिठी हत्या कर डालता है? नायिका अपने धूमिल भाग्य एवं अन्धकारमय भविष्य को साक्षात रूप से देख रही है– ''क्यों क्या, अब इस चक्की में ऐसे ही पिसना है। जन्मभर का रोग है। जन्मभर का रोना है।'' निश्चित रूप से बाल–विवाह किसी असाध्य रोग की दर्दीली पीड़ा से कम नहीं है। कहानी के अन्तिम खण्ड में संयुक्त परिवार प्रणाली के दोष, कुंठित पारिवारिक हिन्दू संरचना एवं पंगु पारिवारिक मानसिकता की बखिया उधेड़ दी गई है। नवविवाहिता को लोक–लाज की ऐसी आचार संहिता रटा दी जाती थी कि उसे अपने पति से संवाद तक करना वर्जित था। उसका, शारीरिक, मानसिक शोषण करने के उपरान्त उसे एक विघन, एक बाधा अवरोध की प्रतिमूर्ति देखा जाता था। स्त्री को पुरुष अपनी पाशविक हवस तृप्त करने का साधन एवं सन्तानोत्पत्ति की मशीन से अधिक स्वीकार नहीं करता। कैसी विडम्बना है जहाँ–जहाँ पुरुष को स्त्री की आवश्यकता महसूस हो वहाँ स्त्री को अर्द्धांगिनी के रूप में मान्यता दे दी जाती है एवं शेष समय पर बंधुआ मजदूर तुल्य जीवन भोगती है। कहानी का उत्तरार्द्ध भाग स्त्री विमर्श से परिपूर्ण है। उपसंहार में स्त्री के विशाल कद को व्याख्यायित किया गया है। स्त्री को पुरुष से अधिक गंभीर, संवेदनशील, धैर्यवान एवं विकसित दिखाया गया है। उसमें क्षमा, शीलता एवं अपनत्व के भाव पुरुष से अधिक होने के कारण राग, द्वेष व स्वार्थ की बू कम होती है। द्वितीय पति–पत्नी का रिश्ता एक पवित्र आस्था की नींव पर खड़े पूजास्थल की भाँति होता है जिसके भीतर दो दिलों के आराध्य स्थापित होते हैं, जिनकी पूजा–अर्चना मात्र विश्वास से की जा सकती है। पुरुष किसी वाहन के इंजन तुल्य है तो स्त्री गाड़ी के पहिये तुल्य। दोनों अपने स्थान पर विशेष, एक–दूसरे के पूरक। पहियों की मानिन्द स्त्री भी जीवन पथ में बिखरे पड़े कंटकों, खाई, गड्ढों, कीचड़ रेत–पानी के मध्य से गुजरते हुए कभी पक्की डामर की सड़क–सा सुख भी प्राप्त करती है। पिता–पति और पुत्र के मध्य एक स्त्री की स्थिति–स्थिति होती है। स्त्री को पुरुष ने ही अबला कर दिया है अन्यथा उसमें असीम–शक्ति समाहित है, गजब के आत्मबल की धनी स्त्री बड़े से बड़े कष्ट से जूझने में सक्षम होती है–

''तुमने कहा था कि कोई एहसान थोड़ा है, काँटा गड़ जाए तो मैं भी निकाल दूँगी।'' ''हाँ निकाल दूँगी।'' ''कैसे?'' ''उसी काँटे से! वह है कहाँ?'' ''मेरे–पास।'' ''उस समय मैं जंगली था, वहशी था, अधूरा था। मनुष्य जब तक स्त्री की परछाई नहीं पा लेता है तब तक पूरा नहीं होता।'' यही कहानी का मूल मन्त्र है और शाश्वत जीवन का प्रकाश भी। स्त्री के बिना पुरुष अधूरा है और पुरुष के बिना स्त्री । फिर भला स्त्री को ही दो पाटों के बीच क्यों पीसा जाता है? यदि समाज और जाति की उन्नति चाहते हो तो सर्वप्रथम हमें स्त्री उन्नति के उपायों को साकार रूप देना होगा। अन्यथा पुरुष की शोषण प्रवृत्ति पुरुष को और

अधिक अहंकारी, विक्षिप्त एवं क्रूर बनाकर विनाश की बाहों में धकेल देगी। पुरुष उत्पत्ति में सहायक है सक्षम नहीं। फिर भला अहंकार कैसा। दूसरा हमें अपने सामाजिक नियमों में परिवर्तन कर उन समस्त कुप्रथाओं को त्यागना होगा जो मानव व समाज के पथ में अवरोध हैं। कुछ विद्वान समीक्षकों का मानना है कि पण्डित गुलेरी द्वारा रचित कहानी 'बुद्धू का काँटा'' मूलत: अंग्रेजी कथाकार श्री ऐन्टॉनी ट्रोलोप की कहानी 'मलाशीज कोव' से गृहीत है किन्तु यहाँ यह स्पष्ट किया जाना अपेक्षित है कि कहानी का कुछ अंश प्रभावित है जबकि कहानी की मूल आत्मा जिसमें नायक-नायिका एवं अन्य स्त्रियों के मध्य पनघट पर जो चर्चा होती है वास्तव में कांगड़ा घाटी में प्रचलित एक लोककथा 'भौन्दू' पर आधारित है। लेखक ने चूँकि अन्य भाषाओं के साहित्य का भी गहन अध्ययन किया था अत: यह सम्भव है कि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उस साहित्य में वर्णित किसी घटना का प्रभाव पड़ जाए किन्तु मूलत: कहानी का आधार एक लोककथा है जिसको लेखक ने बड़े सुलझे हुए ढंग से प्रस्तुत कर कहानी में जान फूँक दी है। यह गुलेरी जी की कलम का जादू ही है। यहाँ सामान्य पाठक वर्ग की जिज्ञाशा का शमन यह जान कर होगा कि उपन्यास एवं कहानी के बेताज बादशाह मुँशी प्रेमचन्द की लेखन प्रक्रिया भी पण्डित गुलेरी से पूर्व प्रारम्भ नहीं हुई थी। तब तक पण्डित गुलेरी की विश्व प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' अपनी धाक जमा चुकी थी। यद्यपि कहानी 'उसने कहा था' प्रारम्भ से आज तक साहित्यिक विवादों के मध्य रहते हुए भी अपने प्रभाव को कायम रखे हुए है। कभी इस कहानी को अंग्रेजी, फ्रांसीसी कहानियों की छाया से प्रभावित सिद्ध करने की चेष्टा की गई तो कभी इसकी मूल कथा पंजाब प्रान्त की प्रसिद्ध लोककथा पर आधारित होने की बात कही गई। वैसे यहाँ पुन: उल्लेख करना समीचीन होगा कि मात्र 'उसने कहा था' कहानी ही नहीं अपितु पण्डित गुलेरी की अन्य कहानियों पर भी ऐसी टिप्पणियाँ होती रहती हैं किन्तु तत्पश्चात् भी इन कहानियों की बुनावट, बनावट एवं कसावट के भीतर जो मौलिक संवेदना, तड़पन एवं स्पन्दन अपने मूर्त रूप में कार्यरत हैं, वास्तव में वही पण्डित गुलेरी के श्रेष्ठ साहित्य शिल्पी रूप से परिचत कराता है। निकष के अपेक्षित मानदण्डों के पश्चात् 'सतसई के बिहारी' और 'उसने कहा था' के रचयिता पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, की कलम का आधिपत्य स्वीकार्य हुआ है जो रचनाकार की श्रेष्ठ प्राज्ञ-प्रांजलता दर्शाता है। पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी का परिवार शुद्ध पंडित-पुरोहित परम्परा से सम्बद्ध होते हुए भी संवेदनशील उत्कृष्ट जनहिताय था जिसके कारण उनमें कभी भी रुढ़, जर्जर पुरातनी विचारों एवं परम्पराओं का ठहराव नहीं हो पाया। यही कारण है कि पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी ने संस्कृत, हिन्दी, अंग्रेजी, ग्रीक साहित्य के अध्ययन के समानान्तर-विज्ञान, गणित, तर्कशास्त्र एवं इतिहास का भी गूढ़ अध्ययन किया जिससे उनके चिन्तन में ऐसी परिपक्वता आई कि उन्हें एक पूर्ण रचनाकार, उत्कृष्ट चिन्तक एवं श्रेष्ठ-संवेदनशील मानव बना दिया। पण्डित गुलेरी की कलम शब्द लिखती नहीं थी अपितु वे कलम के माध्यम से शब्दों को तरासते थे, उनमें प्राण फूँक कर सजीवता प्रदान करते थे जिसके परिणामस्वरूप पात्र स्वयं बोलते-बतियाते और संघर्ष करते प्रतीत होते हैं। उन्होंने स्वयं को रचना से सदैव दूर रखा। मात्र अपनी अनुभूति एवं संवेदनाओं को ही पात्रों से मित्रता करने दी जो पात्रों के सुख, दु:ख में सदैव साथ रहे। बहुचर्चित कहानी 'उसने कहा था' को विद्वान समीक्षकों, आलोचकों एवं पाठ्य सामग्री निर्माताओं-चयनकर्त्ताओं की कलम की निर्मम मार को मूक बन सहना पड़ा है। कहानी की साहित्यिक शल्यक्रिया अत्यन्त गँवारू बेंढंगे व संवदेनशीलता की पराकाष्ठा को लांघते हुए की गई। अश्लीलता की दुराई देकर जो अंश कहानी से हटाये गऐ वे वास्तव में कहानी का जिगर हैं। दृष्टिदोष के कारण हमें अश्लीलता का आभाष होता है। माँ, वस्त्रविहिन अवस्था में भी अश्लीलता से कोसों दूर होती है उसी भाँति पण्डित गुलेरी की उक्त कहानी में से हटाये गए अंश में भी अश्लीलता नहीं अपितु सम्पादकों की मूर्खता, या अनभिज्ञता अधिक प्रतीत होती है। क्योंकि हमारे लोक साहित्य, लोक जीवन-परम्पराओं आदि में अनेकों ऐसे उदाहरण आज भी हमारे समक्ष आते हैं या घटनाएँ घटित होती हैं अथवा कार्यक्रमों की रूपरेखा का साकार रूप देखने को मिलता है यदि उन्हें दृष्टिदोष सहित अथवा विपरीत मानसिक भाव से देखें तो पूर्ण अश्लीलता प्रतीत होगी। जैसे शादी-विवाह में महिलाओं द्वारा गाये गीत, महिलाओं द्वारा बारातियों, दुल्हा, दुल्हे को घर परिवार व रिश्तेदारों के लिए गाये गीत आदि। विशेषत: राजस्थान में राजपूत जाति के लोगों के यहाँ आज भी राणी-डोम आदि जाति के लोगों द्वारा अपने मेहमान के सम्मान में ऐसे गीत गवाये जाते हैं जिन्हें यदि साहित्यिक शल्य प्रक्रिया से गुजारा जाए तो अश्लीलता की कोटि में आ जायेंगे किन्तु हमें उनमें समाहित लोक रहस्य को सूक्ष्म दृष्टि से देखना होगा। विशेषत: जयपुर में लोक जीवन के अन्तर्गत आज भी प्रतिवर्ष 'गालीबाजी' प्रतियोगिता का आयोजन, होता है जिसकी अपनी एवं पुरातन परम्परा है और लोग बड़े उत्साह एवं चाव से उक्त प्रतियोगिता में सम्मिलित होते हैं। कहना न होगा हमें 'अश्लील' शब्द को कहीं भी, किसी के लिए भी बड़ी सरलता से प्रयोग नहीं करना चाहिये। फिर पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी एक विद्वान्, संस्कारित, परिपक्कव रचनाकार थे, अत: यह कतई सम्भव नहीं हो सकता कि वे अपनी सशक्त रचना में किसी भी प्रकार की आपत्तिजनक सामग्री सम्मिलित कर उपहास का पात्र स्वयं बन जाए। यदि हम तत्कालीन रचनाकारों पर दृष्टिपात करते हैं तो हमें महावीर प्रसाद द्विवेदी जैसे व्यक्ति भी दिखते हैं जिनके चारों तरफ विद्वान् रचनाकारों का एक समूह था तो भला द्विवेदी गुलेरी जी को ऐसी पंक्तियाँ लिखे जाने का समर्थन क्यों करते।

निष्कर्षत: 'उसने कहा था' कहानी अपने मूल रूप में पाठकों के समक्ष आनी चाहिये। 'उसने कहा था' कहानी 'मल्टी डायमेन्शन स्टोरी' है। आलोचक, समीक्षक जाने-अनजाने चाहे कितनी तोहमत लगावें किन्तु सच्चे हीरे की भाँति ऐसी रचनाएँ पाठक वर्ग को अपनी कांति की कशिश से सम्मोहित कर ही लेती हैं। मुख्य रूप से 'उसने कहा था' कहानी को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। प्रथम-स्वच्छंद, निर्मल, पावन, प्रेम कहानी के रूप में। द्वितीय युद्ध की पूर्वार्द्ध एवं उत्तरार्द्ध स्थिति का वर्णन। प्रेम कहानी में जहाँ नि:स्वार्थ भावना एवं अलौकिक प्रेम के दर्शन होते हैं वहीं युद्ध जैसी विभीषिका के परिणामों से हमें यह सीख लेनी चाहिये कि विनाश का नाम ही युद्ध है। युद्ध से मानव का ही नहीं सम्पूर्ण पृथ्वी की कोख बाँझ होती है। अत: हमें मिथ्या अहंकार का त्याग कर सद्भावनापूर्वक जीवनयापन करना चाहिए। कहानी के नेपथ्य में समाहित तृतीय पक्ष पूर्व में दोनों पक्षों में सशक्त एवं महत्त्वपूर्ण हैं। कहानी के समस्त पात्रों ने अपने मानवीय नैतक कर्त्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वाह किया है। किसी भी पात्र के चरित्र में नैतिक ह्रास का अनुभव नहीं होता। बालपन में नि:स्वार्थ पावन प्रेम का श्रद्धा में परिवर्तित होता रूप देखिये- ''सुबेदारनी होरां को चिट्ठी लिखीं तो मेर मत्था टेकना लिख देना।'' लहनासिंह के इन वाक्यों में शुद्ध भारतीय संस्कृति के दर्शन होते हैं।

जैसा कि पूर्व में उल्लेखित किया जा चुका है कहानी के पात्र योद्धा, साहसी, धैर्यवान, भावुक व निश्छल प्रेमी, कर्त्तव्यनिष्ठ चरित्रवान, श्रेष्ठ व्यक्तित्व वाले देशप्रेमी, सच्चे मित्र, आत्मोत्सर्गधारी भारतीय सैनिक आदि के रूप में दृष्टिगोचार होते हैं।

निष्कर्षत: पात्रों की सशक्तता, संवेदनशीलता एवं कर्त्तव्यपरायणता ही श्रेष्ठ व कालजयी कहानी को जन्म देती है। यदि कहीं भी पात्रों में शिथिलता आ जाती है तो कहानी ठस से जमीन पर बैठ जाती है।

सशक्त कथानक का एक अंश देखिये-''मैंने तेरे को आते ही पहचान लिया। एक काम कहती हूँ। -- एक बेटा है। फौज में भरती हुए इसे एक ही बरस हुआ।----तुम्हें याद है, एकदिन ताँगेवाले का घोड़ा दही वाले की दुकान के पास बिगड़ गया था। तुमने उस दिन मेरे प्राण बचाए थे। आप घोड़े की लातों में चले गए थे और मुझे उठाकर दुकान के तख्ते पर खड़ा कर दिया था। ऐसे इन दोनों को बचाना।----तुम्हारे आगे मैं आँचल पसारती हूँ।'' प्रस्तुत अंश में बाल प्रेम की निश्छल स्मृति के सहारे माँ का ममत्व, पत्नी का दायित्व एवं देश प्रेम की भावना का मार्मिक उल्लेख हुआ है। कहना न होगा 'उसने कहा था' कहानी के कथानक में समाहित भोलापन ही श्रेष्ठता प्रदान करता है। चूँकि 'उसने कहा था' कहानी कसौटी पर सफलतापूर्वक खरी उतरती है अत: इसे हिन्दी साहित्य की प्रथम मौलिक कहानी मानी जा सकती है। ऐसी विलक्षण कालजयी कहानी बिरले ही रचनाकारों की कलम से यदा-कदा प्रस्फुटित होती हैं।

पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की अन्य कहानी 'हीरे का हीरा' भी उपलब्ध हुई है।

इस कहानी के कथानक के आधार पर इसे उसने कहा था' का उत्तरार्द्ध भाग माना जा सकता है। इसमें लहनासिंह युद्ध भूमि से जीवित लौट आता है। कहानी का प्रारम्भ ही भारतीय पौराणिक-धार्मिक मान्यताओं को मूर्तरूप प्रदान करने से होता है-गोबर से घर के आँगन को लीपना, पीसे हुए चावल से माण्डने-माँडना, दूब, बिल्व पत्र, नाल, लाल डोरा एवं कुमकुम आदि से अन्य पूजा अर्चना व धार्मिक विधान-क्रिया पूर्ण करने से होता है। तीन वर्ष के लम्बे बिछोह को झेलने के पश्चात् नायिका गुलाब देई आज अति प्रसन्न दिखाई दे रही है। सात वर्षीय पुत्र हीरा अपने पिता के आगमन हेतु कुलाचें भर रहा है, खुशी से फूला जा रहा है। नायक लहनासिंह जिसकी एक टाँग जख्मी होने के कारण हाँगकाँग में काटनी पड़ी। बैसाखियों के सहारे आज घर की देहरी तक आ पहुँचा है। माँ की वात्सल्यता एवं पत्नी के विशुद्ध प्रेम ने लहनासिंह को अपने आगोश में भर लिया।

युद्ध की विभीषिका एवं संकीर्ण मानवीय सोच पर तीव्र प्रहार करती कहानी हार में जड़ित मोतियों की भाँति शब्दों के सहारे अपना सफर तय करती है-

''चेहरे पर दाढ़ी बढ़ी हुई थी औ उसके बीच-बीच में तीन घावों के खड्डे थे। बालकपन में जहाँ सूर्य, चन्द्र, मंगल आदि ग्रहों की कुदृष्टि को बचाने वाला ताबें- चाँदी की पतड़ियों और मूँगे आदि का कठला था वहाँ लाल फीते से चार चाँदी के गोल-गोल तमगे लटक रहे थे। और जिन टाँगों ने बालकपन में माता की रजाई को पचास-पचास दफा उघाड़ दिया उनमें से एक की जगह चमड़े के तसमों से बंधा हुआ डंडा था। धूप से स्याह पड़े हुए और मेहनत से कुम्हलाए हुए मुख पर और महीनों तक खटिया लेने की थकावट से पिलाई हुई आँखों पर भी एक प्रकार की वीरता की, एक तरह के स्वावलम्बन की ज्योति थी----।''

यद्यपि यह कहानी अपूर्ण एवं खण्डित है। अन्तत: पण्डित चन्द्रधर शर्मा गुलेरी के कथा साहित्य की प्रत्येक कहानी का प्रत्येक शब्द एक बहुत बड़े रहस्य को अपने भीतर दफर किये हुए है।

आलोचक मात्र यह कह कर पल्ला झाड़ लेते हैं कि गुलेरी ने मात्र ढाइ कहानी लिखी हैं शेष उनके निबन्ध हैं तो यहाँ यह कहना उचित होगा कि पुन: निबन्ध एवं कहानी के मापदण्डों पर पुनर्विचार अपेक्षित हैं अन्यथा प्रस्तुत शोध पत्र में सम्मिलित रचनाओं को मैं कहानी विधा की श्रेणी में ही स्वीकार करता हूँ। आमीन

सन्दर्भ-

1. साहित्यक निबन्ध : डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास-डॉ. नगेन्द्र
3. हिन्दी निबन्धकार-जयनाथ नलिन,